वस्त्र उत्पादन – भारतका महान् उद्यम

वस्त्र उत्पादन अंग्रेज़ोंसे पहलेके भारतका प्रमुख औद्योगिक उद्यम था। उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भतक भारत वस्त्रोंके उत्पादन और निर्यातमें विश्वमें अग्रणी था। चीनका स्थान दूसरा हुआ करता था।

सूत कातनेमें तो कदाचित् समस्त भारत भाग लेता था। इंग्लैंडमें वस्त्र-उत्पादनके केन्द्र मानचेस्टरके एक पर्यवेक्षक आर्नो पेयर्स वस्त्र उद्योगका अध्ययन करनेके लिये १९३० में भारत आये थे। उनका अनुमान था कि उस समय भी भारतमें प्रायः पाँच करोड़ चरखे उपयोगमें थे। और यह साधारण-सा सीधा-सरल यन्त्र इतना कार्यक्षम था कि बीसवीं सदीके उस तीसरे दशकमें भी कोई विधवा माँ दिनमें कुछ घंटे चरखा कातकर अपने पूरे परिवारका भरण कर सकती थी।

वस्त्रोंकी बुनाई अपेक्षाकृत अधिक विशेषज्ञताका काम था। तथापि भारतमें बुनकर-जातियोंके लोगोंकी संख्या केवल कृषक-जातियोंके लोगोंकी संख्यासे ही न्यून हुआ करती थी। विभिन्न ऐतिहासिक आकलनोंके अनुसार भारतके पाँच प्रतिशतसे अधिक लोग बुनाई में लगे थे। दक्षिण-भारतके कुछ प्रदेशोंके उन्नीसवीं ईसवी शताब्दीके आँकड़े उपलब्ध हैं। इनके अनुसार उस समय वहाँ प्रत्येक जनपदमें प्रायः २०,००० करघे थे। आर्नो पेयर्सका अनुमान था कि तब समस्त भारतमें २० लाखके आसपास हथकरघे रहे होंगे।

वस्त्र उत्पादन – भारतका महान् शिल्प

वस्त्र उत्पादन सम्बन्धी सब विधाओंमें भारत अपनी अनुपम कलात्मकता एवं उच्च कौशलके लिये विख्यात रहा है। भारतके विभिन्न क्षेत्रोंमें विशेष प्रकारके वस्त्रोंके उत्पादनकी विशिष्ट दक्षता विकसित हुई थी। प्रत्येक क्षेत्रकी बुनाई, रंगकटाई, रंगाई एवं चित्रकारीकी अपनी पृथक्-पृथक् तकनीकें थीं। प्रत्येक क्षेत्रका अपना विशिष्ट सौंदर्यबोध था। उसके अनुरूप विभिन्न क्षेत्रोंके वस्त्रोंकी अपनी-अपनी बनत होती थी, अपनी पृथक् प्रकारकी बेल-बूटियाँ होती थीं, पृथक् प्रकारकी कढ़ाई थी, पृथक्-पृथक् चित्र और ठप्पे थे।

उदाहरणतः पश्चिमी भारतमें राजस्थानके सिरोंज एवं खांदेशके बुरहानपुर नगर सूती कपड़ेपर चित्रकारीके प्रमुख केन्द्र थे। छपा हुआ सस्ता कपड़ा अहमदाबादसे आता था। ऊनी कपड़े काश्मीरमें बनते थे, इन्हींमें विश्व विख्यात काश्मीरकी शॉलें भी थीं। गुजरातके पाटन नगरमें उत्कृष्ट रेशमकी पाटोला साड़ियाँ बनती थीं।

विभिन्न क्षेत्रोंमें प्रचलित ये सब विशिष्ट तकनीकें एवं कलाएँ इतनी परिष्कृत थीं कि ब्रिटेनमें औद्योगिक क्रान्तिके पश्चात् की उच्च यान्त्रिकीसे निर्मित वस्त्र गुणवत्ता एवं मूल्यमें भारतमें उत्पादित वस्त्रोंकी तुलना नहीं कर पाते थे। उन्नीसवीं सदीके प्रारम्भिक दशकोंतक ब्रिटेनमें वहाँकी मिलोंमें बने कपड़ेको व्यापारिक संरक्षण देनेके लिये भारतसे आयातित सूती एवं रेशमी वस्त्रोंपर ७० से ८० प्रतिशततक शुल्क लगाया जाता था। अनेक परिस्थितियोंमें भारतसे वस्त्रोंका आयात पूर्णतः प्रतिबन्धित था। इस सन्दर्भमें इतिहासकार होरेस विल्सनका कहना था कि इन भारी शुल्कों एवं प्रतिबन्धोंके बिना 'पेसली एवं मानचेस्टरकी कपड़ा मिलें प्रारम्भ होनेसे पहले ही ठप्प हो गयी होतीं और भापकी ऊर्जा भी उन्हें पुनः चालू करनेमें असमर्थ रहती।'

लौह एवं इस्पातके निर्माणमें भारत अग्रणी रहा है

भारतमें सिन्धु-गङ्गा मैदानके दक्षिणमें स्थित प्रायः सब स्थानोंपर लौह-अयस्क पाया जाता है। और इन सब स्थानोंपर प्राचीनतम कालसे लेकर प्रायः वर्तमानतक अयस्कको गलाकर लोहा एवं इस्पात बनाया जाता रहा है। मध्य-भारतमें कैमूर पहाड़ियोंके उत्तरी छोरपर और झारखण्ड क्षेत्रमें आज भी लोहा एवं इस्पात बनानेवाले अगरिया लोहार किसी-न-किसी स्तरपर अपनी पारम्परिक दक्षताको जीवित रखे हुए मिल जाते हैं। दक्षिणके पठार एवं प्रायद्वीपीय भागोंके सैंकड़ों गांवोंमें पड़े धातुमलके ढ़ेर वहाँ सैंकड़ों-सहस्रों वर्षोंतक लोहा एवं इस्पात बनाये जानेके साक्षी हैं।

अनेक यूरोपीय पर्यवेक्षकोंने भारतमें लौह एवं इस्पातके उत्पादनकी व्यापकता व परिष्कृत तकनीकके विस्तृत वृत्तान्त लिखे हैं। इन वृत्तान्तोंमें भारतभरमें फैले हुए कदाचित् सौ जनपदोंमें चल रही लौह एवं इस्पातके उत्पादनसम्बन्धी गति-विधियोंका वर्णन हुआ है। इन वृत्तान्तों एवं अन्य ऐतिहासिक स्रोतोंके आधारपर एक इतिहासकारका आकलन है कि अठारहवीं शताब्दीके उत्तरार्द्धमें भारतमें लोहा गलानेकी दस हजारसे अधिक भट्ठियाँ कार्यरत थीं। इनकी लौह उत्पादनकी वार्षिक क्षमता दो लाख टनके आसपास रही होगी।

भारतीय इस्पात अपनी असाधारण गुणवत्ता एवं उत्कृष्टताके लिये विश्वभरमें विख्यात रहा है। यूनानी योद्धा सिकन्दरने चौथी शताब्दी ईसापूर्वमें शूरवीर भारतीय नरेश पुरूरवासे सौ यूनानी मुद्राओंके तुल्य इस्पात पाकर अपनेको गौरवान्वित माना था। पश्चिमी विश्व सुप्रसिद्ध दमिश्क तलवारोंके माध्यमसे भारतीय इस्पातसे बहुत पहलेसे परिचित है। ये तलवारें भारतसे आयातित विख्यात 'वूट्ज़' इस्पातसे ही बनाई जाती थीं। उन्नीसवीं शताब्दीके महान् ब्रिटिश वैज्ञानिक माइकल फैराडे जिनके विद्युत-सम्बन्धी प्रयोगोंने भौतिक-विज्ञानको एक नयी दिशा दी, वे भारतीय वूट्ज़ इस्पातसे अत्यन्त प्रभावित थे और विभिन्न कार्योंके लिये पर्याप्त मात्रामें वूट्ज़ अपने पास रखे रहते थे।

दिल्लीका लौहस्तम्भ

बहुत ऊँची गुणवत्ताके लौहसे बने बड़े आकारके स्तम्भ भारतके प्रायः सब क्षेत्रोंमें स्थान-स्थान पर मिल जाते हैं। दिल्ली नगरमें स्थित महरौलीका लौहस्तम्भ इनमें से विशेष उल्लेखनीय है। इस लौहस्तम्भके विशाल आकार एवं अनेक शताब्दियोंतक इसके क्षरणमुक्त रहनेके गुणसे धातुविज्ञानी आश्चर्यचकित होते रहे हैं। इस स्तम्भकी ऊँचाई २४ फुटसे कुछ अधिक है और इसके आधारका व्यास प्रायः साढ़े सोलह इंच है। स्तम्भका भार छः टन है। डेढ़ हजारसे अधिक वर्षोंसे यह स्तम्भ कालकी गतिको झेलता आया है, परन्तु किसी प्रकारके क्षरण अथवा विकृतिका कोई लक्षण इसपर दिखाई नहीं देता। विश्वके धातुविज्ञानी उन परिष्कृत तकनीकोंके विषयमें अनुमान लगाते रहते हैं जिनका उपयोग कर भारतीयोंने इस उच्च गुणवत्ताके लौहका उत्पादन किया होगा। और, वे धातुढलाई एवं निर्माणकी उन विधाओंका अध्ययन करनेका प्रयास करते हैं जिनका कुशल उपयोग कर भारतीयोंने इतने पूर्वकालमें धातुके इतने बड़े एवं भारी स्तम्भको ढालकर खड़ा किया।

उन्नीसवीं सदीके उत्तरार्द्धमें दिल्लीके इस लौह स्तम्भके सन्दर्भमें एक ब्रितानी पर्यवेक्षकका विचार था कि 'कुछ ही वर्ष पहलेतक विश्वके सबसे बड़े ढलाईघरोंमें ऐसे स्तम्भका निर्माण करना असम्भव था और आज भी विश्वमें कुछ गिनेचुने ही ऐसे स्थान हैं जहाँ धातुके इतने बड़े घनकी ढलाई की जा सकती है।' यह बात १८८१ की है, तब ब्रिटेनमें औद्योगिक क्रान्तिका प्रादुर्भाव हुए सौसे अधिक वर्ष हो चुके थे।

विपुल भौतिक समृद्धि
उच्च तकनीकी दक्षताएँ

लौहस्तम्भका चित्र श्री आर. बालसुब्राह्मन्यन्‌के सौजन्यसे

विपुल भौतिक समृद्धि
उच्च तकनीकी दक्षताएँ